शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अगस्त 2016
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

काव्यशास्त्र के सिद्धांतों का तुलनात्मक अध्ययन

श्रीमती वन्दना वर्मा
शोधार्थी-संस्कृत
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय
इंदौर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

काव्यशास्त्र का प्राचीन नाम अलंकार शास्त्र है। यह इससे भी सिद्व होता है कि प्राचीन आचार्यों के ग्रन्थों के अभिधान में अलंकार शब्द का प्रयोग हुआ है। जैसे भामह का काव्यालंकार , रूद्रट का काव्यालंकारसर्वस्व , वामन का काव्यालंकारसूत्रवृत्ति आदि। भारतीय साहित्य में काव्यालंकारशास्त्र आज एक सुप्रतिष्ठित शास्त्र है परन्तु इस शास्त्र का आरम्भ कब हुआ यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। राजशेखर ने काव्यमीमांसा में इस शास्त्र की उत्पत्ति के विषय में कथा का वर्णन किया है, परन्तु वह किसी अन्य अलंकारशास्त्र के ग्रन्थ में प्राप्त नहीं है। प्रस्तुत शोध पत्र में काव्यशास्त्र के सिद्धांतों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना

काव्यशास्त्र का प्राचीन नाम अलंकार शास्त्र है। यद्यपि दण्डी के शब्दों में इसका मूल तत्व शोभा या सौंदर्य कहा जा सकता है। दण्डी ने अपने 'काव्यादर्श' में कहा है- काव्यशोभाकरान धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते।1 इससे स्पष्ट है कि काव्य की शोभा को उत्पन्न कराने वाले धर्म अलंकार कहलाते हैं। मध्य युग तक आते-आते अलंकारशास्त्र को साहित्य शास्त्र भी कहा जाने लगा। प्रारंभ में आचार्यों ने इस शास्त्र का नाम काव्यालंकार रखा था। शास्त्र शब्द का प्रयोग उसके साथ नहीं होता था। सामान्य रूप से 'शासनात शास्त्रम' शासन करने वाला होता है। वेदान्त दर्शन में शास्त्र शब्द की एक और व्युत्पत्ति दी गई है। उसके अनुसार किसी गूढ़ तत्व का शंसन या प्रतिपादन करने वाले ग्रन्थ भी शास्त्र कहलाते हैं। इसी आधार पर अलंकारशास्त्र या काव्य शास्त्र में इस शब्द का प्रयोग हुआ है।

काव्यशास्त्र के सिद्धांतों का परिचय

अलंकारशास्त्र का विधिवत् विकास आचार्य भरत से ही माना जाता है। सम्पूर्ण साहित्य शास्त्र को हम दो प्रकार से विभाजित कर सकते हैं। एक कालखण्ड के आधार पर तथा दूसरे सिद्धांतों के आधार पर। सिद्धांतों के अन्तर्गत अलंकार सम्प्रदाय तथा औचित्य सम्प्रदाय। अध्ययन की सुविधा के लिये इस शास्त्र के सभी आचार्य किसी न किसी सिद्धांत से सम्बन्धित किये जा सकते हैं, परन्तु काल-खण्ड के हिसाब अथवा विकासक्रम के आधार पर भी इसके चार विभाग किये जाते हैं, जो इस प्रकार हैं -

1. प्रारम्भिक काल (अज्ञात से लेकर भामह तक)
2. रचनात्मक काल (भामह से लेकर आनन्दवर्धन तक)
3. निर्णयात्मक काल (आनन्दवर्धन से लेकर मम्मट तक)
4. व्याख्या काल (मम्मट से लेकर पण्डित राज जगन्नाथ तथा आचार्य विश्वेश्वर तक)

इस आधार पर इनका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है-

1. प्रारम्भिक काल - इस काल में मुख्य रूप से भरत और भामह दो आचार्यों को सम्मिलित किया जाता है। इनसे पूर्व भी अज्ञात नामा आचार्य रहे होंगे या उनकी कोई रचनाएं रही होंगी, जो कालकवलित हो गई , जिसमें नाट्य के सूक्ष्म तत्वों का विवेचन बहुत सुन्दर रूप से किया गया है। इसके अतिरिक्त भी अनेक कलाओं का विवेचन भी इसमें प्राप्त होता है। इसे नाट्यशास्त्र का मूल ग्रन्थ कहना ज्यादा उपयुक्त है। अलंकार शास्त्र की दृष्टि से इसमें कुछ ही वर्णन प्राप्त होते हैं।

2.रचनात्मक काल- साहित्यषास्त्र का दूसरा महत्वपूर्ण रचनात्मक काल है , जो 600 से 900 विक्रम संवत् के बीच का है। इस रचनात्मक काल में साहित्यशास्त्र के मौलिक सिद्धांतों का तथा मौलिक ग्रन्थों का प्रणयन हुआ, इसलिए यह काल सबसे महत्वपूर्ण माना गया है। जैसे अलंकार संप्रदाय में भामह के बाद उद्भट और रूद्रट आए, तो रीति सम्प्रदाय के प्रवर्तक और भट्ट नायक भी इसी काल में हुए। ध्वनि सिद्धांत के परमाचार्य एवं संस्थापक आनन्दवर्धन भी इसी युग की देन है।

3.निर्णयात्मक काल - आनन्दवर्धन से लेकर आचार्य मम्मट तक साहित्यशास्त्र का तीसरा और महत्वपूर्ण काल निर्णयात्मक काल है। यह काल 800 वि.स. से लेकर 1000 वि.स. तक माना गया है। ध्वन्यालोक की प्रसिध्द टीका 'लोचन' तथा नाट्य शास्त्र की टीका 'अभिनव भारती ' के निर्माता अभिनव गुप्त इसी काल में हुए। इनके अतिरिक्त वक्रोक्ति सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य कुन्तक, व्यक्ति विवके के आचार्य महिम भट्ट इस युग की उपलब्धियां हैं। महिम भट्ट ध्वनि सिद्धांत के कट्टर विरोधी हैं, उन्होंने ध्वनि के एक-एक भेद का विद्वतापूर्ण खण्डन प्रस्तुत किया है इसलिए उनका व्यक्तिविवेक 'ध्वनि सिद्धांत का मूल खण्डन करने वाला एक उच्च कोटि का ग्रन्थ है। इसी प्रकार 'वक्रोक्तिजीवित' में भी आचार्य कुन्तक ने अपनी प्रतिभा और उत्कृष्ट मेधा के बल पर वक्रोक्ति सम्प्रदाय का प्रणयन किया है जो काव्य साहित्य में एक नवीन सम्प्रदाय के रूप में स्थापित हुआ।

4.व्याख्या काल - साहित्यशास्त्र का सबसे महत्वपूर्ण समय व्याख्याकाल कहलाता हैं इसमें मम्मट से लेकर पण्डित राज जगन्नाथ तथा आचार्य विश्वेश्वर तक को सम्मिलित किया जाता है। यह समय 1000 वि.स. से लेकर 1800 वि.स. तक माना गया है अर्थात् इसका काल 800 वर्ष के लगभग है। यह सबसे लंबा काल है। इसमें अनेक आचार्य हुए जिन्होंने अपने सर्वांगपूर्ण रचनाओं से साहित्य को समृद्ध किया तथा साहित्य के सम्पूर्ण विषयों को लेकर अपनी रचनाएं प्रस्तुत की हैं। इनमें हेमचन्द्र, विश्वनाथ, जयदेव, आचार्य मम्मट , पण्डित राज जगन्नाथ तथा आचार्य विश्वेश्वर प्रमुख है। इसके अतिरिक्त शारदातनय, सिंहभूपाल, भानुदत्त आदि का कार्य भी प्रशंसनीय है। इस युग में ध्वनि संप्रदाय, रस संप्रदाय, अलंकार संप्रदाय तथा कवि शिक्षा को प्रचारित करने वाले तथा पुष्ट करने वाले अनेक आचार्य हुए है।

निष्कर्ष

पन्द्रहवीं शताब्दी के बाद प्रायः यह प्रवृत्ति दिखाई देती है , जिसमें काव्य शास्त्र के समस्त सिद्धांतों का समावे श एक साथ एक ग्रन्थ में करने के प्रयास हुए हैं, जिनमें आचार्यो, मम्मट का काव्यप्रकाश, विश्वनाथ कविराज का साहित्यदर्पण और पण्डित राज का रस गंगाधर महत्वपूर्ण है।

इन सब में सम्यक विवेचन प्राप्त होता है। इसलिए कोई भी काव्य का सिध्दान्त किसी भी मत की उपेक्षा करके नहीं चल सकता। काव्यशास्त्र के समग्र स्वरूप के लिए रस अलंकार, रीति (गुण) , ध्वनि वक्रोक्ति और औचित्य सभी का समन्वय आवश्यक है। सभी मिलकर काव्य का पूर्ण स्वरूप विकसित करते हैं। काव्यशास्त्र की सम्पूर्णता इस सभी में है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1.बलदेव उपाध्याय, काव्यशास्त्र की उत्पत्ति और विकास' चौखम्बा विद्‍याभवन, वाराणसी,1979

2.डॉ.. ए.बी. कामथ , संस्कृत साहित्य का इतिहास , मोतिलाल बनारसी दास,1960

3.हेमचन्द्र, काव्यानुशासन, नंदकिशोर एण्ड संस,1964

4.भानुदत्त, रसतरंगिणी, श्रीग्रन्थमाला